महात्मा गाँधी का हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम

*डॉ. भरत कुमार

शोध सारांश

भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी गुजराती मूल के होने के बावजूद हिंदी के सबसे बड़े पैरोकोर रहें। उन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा और संपर्क भाषा के रुप में संपूर्ण भारत के लिए आवश्यक माना। इसके लिए 1909 से लेकर 1948 तक अपने विभिन्न आलेखों, भाषणों, समाचार पत्रो, कांग्रेस पार्टी के अधिवेशनों के माध्यम से मुखरता से प्रस्तुत किया। गाँधी के हिंदी प्रेम हिंदी–उर्दू मिश्रित हिंदुस्तानी रही। गाँधीजी मानते थे कि गंगा–जमुना–सरस्वती की तर्ज पर हिंदी–उर्दू के मिलन से पैदा हुई हिंदुस्तानी–हिंदी ही भारत के लिए श्रेष्ठ संपर्क भाषा और राष्ट्रभाषा हो सकती है। अपने हिंदी प्रेम के लिए गाँधीजी हिंदी और उर्दू दोनों वर्गों को हिंदुस्तानी अपनाने पर जोर देते है तथा अंग्रेजी की आवश्यकता, प्रांतीय भाषा को पूरक भाषा और परस्पर सहयोगी मानकर अपने हिंदी प्रेम को उजागर करते है। उपरोक्त आलेख में महात्मा गाँधी की हिंदी प्रेम की ऐतिहासिक यात्रा के साथ–साथ, समय समय होने वाले संघर्षों एवं अंतिम परिणति को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

Keywords: हिंदी, उर्दू, हिंदूस्तानी, अरबी, पारसी, राष्ट्रभाषा, राजभाषा, प्रादेशिक भाषा, संपर्क भाषा, स्वतंत्रता आंदोलन, हिंदी सम्मेलन, हरिजन, यंग इंडिया, समुदाय, धर्म, ब्रिटिश सरकार, विद्यार्थी, हिंदू–मुसलमान, भारतवासी, समुदाय

"उत्तर में श्रीनगर से दक्षिण में कन्याकुमारी तक और पश्चिम में कराची से डिब्रूगढ़ तक पहुँचती हो और इतनी पहुँचनी भी चाहिए तो उसेक लिए आपके पास हिंदी को छोड़कर और कोई माध्यम नहीं।" –: महात्मा गाँधी

महात्मा गांधी गुजराती मूल के होने के बावजूद हिंदी के सबसे बड़े पैरोकोर रहें। गौरतलब है कि गाँधी जी के सामाजिक, राजनीतिक चिंतन के साथ साथ सांस्कृतिक और भाषिक चिंतन के बीज तत्व हमें हिंद स्वराज में मिलते है। हिंदी स्वराज में शिक्षा के संदर्भों पर विचार करते हुए महात्मा गांधी लिखते है कि 'हर एक पढे लिखे हिंदुस्तानी को अपनी भाषा का, हिंदू को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को फारसी का और सबको हिंदी का ज्ञान होना चाहिए। कुछ हिंदुओं को अरबी और कुछ मुसलमानों और पारसियों को संस्कृत सीखनी चाहिए उसे उर्दू या नागरी में लिखने की छूट रहनी चाहिए। हिदू-मुसलमानों के विचारों को ठीक रखने के लिए बहुतेरे हिंदुस्तानियों को दोनों लिपियाँ जानना जरुरी है। ऐसा होने पर हम अपने आपस के व्यवहार में से अंग्रेजी को निकाल बाहर कर सकेंगे।'

महात्मा गांधी के ये भाषिक विचार प्रारंभिक तौर पर दक्षिण अफ्रीका प्रवास के दौरान निर्मित हुए, जो शनैः शनैः हिंदुस्तानी की वकालत करने लगते है। गाँधी जी भाषा के सवालों पर विचार करे तो हमें देखना होगा कि महात्मा गांधी का हिंदी भाषा के प्रति प्रेम पर विचार करें तो इसके विभिन्न स्तर पर दिखाई देते है। गाँधी जी का मानना था कि प्रत्येक भारतवासी को अपनी मातृभाषा के साथ–साथ हिंदी को जरुर सीखना चाहिए। राष्ट्रभाषा के मामले में गांधी की दृष्टि का महत्वपूर्ण स्थान रहा। उनका मानना था कि एक आम भाषा में समुदायों के बीच की खाई को

पाटने और लोगों को एक साथ लाने की शक्ति होनी चाहिए। दूसरे दक्षिण अफ्रीकी प्रतिनिधिमंडल के सदस्य के रूप में – मातृभाषा और राष्ट्रभाषा में, उन्होंने 1909 में लिखा "अपने देश को अपना कहने से पहले हमारी भाषाओं के लिए प्यार और सम्मान आवश्यक है। एक सामान्य भाषा भविष्य के लिए एक संभावना है, और एक प्रांत के लोगों के लिए दूसरों की भाषा सीखना आवश्यक है ... "

महात्मा गाँधी की प्रत्येक भारत वासी के लिए हिंदी सीखने के पीछे गिरमिटिया मजदूर तथा रोजगार की तलाश में भाषिक वार्तालाप के लिए एक राष्ट्रव्यापी भाषा के रुप में हिंदी की वकालत करने का कारण रोजगार और संवाद स्थापित करना भी रहा। महात्मा गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका में विभिन्न भाषा–भाषी समुदाय के मध्य कार्य करते हुए हिंदी की आवश्यकता को समझते हुए प्रत्येक भारतवासी के लिए हिंदी सीखने को जरुरी माना। गाँधी जी भाषिक चिंतन पर विचार करते हुए इतिहास के पन्नों पर विचार करें तो गिलक्रिस्ट की 'ए वाकेबुलरी हिंदुस्तानी एंड इंग्लिश' पुस्तक में राष्ट्रभाषा के सवाल पर भी नजर डाल देनी चाहिए। राष्ट्रभाषा के संदर्भ में 29 अगस्त 1806 को दिल्ली के असिस्टेंट रेजिडेंट मेटकाफ अपने हिंदुस्तानी शिक्षक गिलक्रिस्ट को लिखते है कि "भारत के जिस भाग में मुझे काम करना पड़ा है, कलकत्ता से लेकर लाहोर तक, कुमाऊँ के पहाड़ों से नर्मदा तक, अफगानों, मराठों, राजपूतों, जाटों, सिखों और उन प्रदेशों के सभी कबीलों में जहाँ मैंने यात्रा की है, मैंने उस भाषा को आम व्यवहार देखा है, जिसकी शिक्षा आपने मुझे दी ती। अपने अनुभव और दूसरों से सुनी हुई बातों के बल पर मैं कन्याकुमारी से कश्मीर तक या आवा से सिंधु के मुहाने तक इस विश्वास से यात्रा करने की हिम्मत कर सकता हूँ कि मुझे हर जगह ऐसे लोग मिल जाएँगे जो हिंदुस्तानी बोल लेते है।

मेटकॉफ ने हिंदुस्तानी की सर्वव्यापकता को अपने काम से समझा वहीं गांधीजी ने अपने दक्षिण अफ्रीकी प्रवास के दौरान साझे संवाद में हिंदुस्तानी की प्रासंगिकता को समझा। गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में देखा कि वहाँ हिंदी, गुजराती, तमिल–तेलगु आदि भाषाएं बोलने वाले आपसी व्यवहार के लिए हिंदी का ही इस्तेमाल करते है। भारत भ्रमण विशेषकर दक्षिण की यात्राओं में भी उन्होंने इस बात को ही महसूस किया। इस संबंध में उन्होंने लिखा है, "यह कहना सही नहीं है कि मद्रास में अंग्रेजी के बिना काम नहीं चल सकता। मैंने अपने सारे कामों के लिए वहाँ सफलतापूर्वक हिंदी का व्यवहार किया है। मैंने रेल में मद्रासी मुसाफिरों को हिंदी में बात करते सुना है। हिंदी के प्रति अपने प्रेम भाव और इसकी व्यापकता को दृष्टिगोचर करते हुए गांधी जी का यह कथन महत्वपूर्ण है कि "उत्तर भारत का भैया बंबई के सेठ के यहाँ दरबानगिरी करता है, वह गुजराती नहीं बोलता, उसका सेठ ही मजबूर होकर उससे टूटी–फूटी हिंदी में बातचीत करता है।"

महात्मा गांधी भारत की भाषाई विविधता को समझते हुए आजादी के आंदोलन को शक्ल प्रदान कर रहे थे। गांधी जी की नजर में भारत की राष्ट्रीय भाषा देश के हिंदुओं और मुसलमानों द्वारा बोली जाने वाली साझा भाषा जो न हिंदी होगी ना उर्दू उसे गांधी जी ने ''हिंदुस्तानी'' कहा था। गाँधीजी ने इस बात को 1916 में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय व्याख्यान, 1917 में गुजरात शैक्षिक सम्मेलन तथा 1918 में हिंदी साहित्य सम्मेलन में स्पष्ट रुप कहा। इसके पश्चात उनकी हिंदुस्तानी के प्रति राय पुख्ता होने लगी।

6 फरवरी, 1916 को बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में बोलते हुए उन्होंने कहा था, "मैं कहना चाहता हूँ कि मुझे आज इस पवित्र नगर में, इस महान विद्यापीठ के प्रांगण में अपने ही देशवासियों से एक विदेशी भाषा में बोलना पड़ रहा है, यह बड़ी अप्रतिष्ठा और शर्म की बात है। पिछले दो दिनों में यहां जो भाषण दिए गए उनमें लोगों की परीक्षा ली जाए और मैं परीक्षक होऊँ तो निश्चित है कि ज्यादातर लोग फेल हो जाएँ। क्यो? इसलिए कि इन व्याख्यानों ने उनके ह्रदय को नहीं छुआ। मैं गत दिसंबर में राष्ट्रीय महासभा के अधिवेशन में मौजूद था। वहाँ बहुत अधिक तादात में लोग इकठ्टे हुए थे। आपको ताज्जुब होगा कि बंबई के वे तमाम श्रोता केवल उन भाषणों से प्रभावित हुए, जो

हिंदी में दिए गए थे।मुझे आशा है कि इस विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को उनकी मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने का प्रबंध किया जाएगा। यदि आप मुझसे यह कहें कि हमारी भाषाओं में उत्तम विचार अभिव्यक्त किए ही नहीं जा सकते, तो हमारा संसार से उठ जाना अच्छा है। इसी सम्मेलन में गांधी जी ने बेहतर शिक्षा के लिए एक राष्ट्रभाषा के रुप में हिंदी की वकालत करते हुए कहा कि "मान लिजिए कि हमने पिछले पचास वर्षों में अपनी–अपनी भाषाओं के जरिए शिक्षा पाई होती, आज हम किस स्थिति में होते? तो आज भारत स्वतंत्र होता, तब हमारे पढ़े–लिखे लोग अपने ही देश में विदेशियों की तरह अजनबी न होते, बल्कि, देश के ह्रदय को छूने वाली वाणी बोलते, वे गरीब से गरीब लोगों के बीच काम करते और पचास वर्षों की उनकी उपलब्धि पूरे देश की विरासत होती।"

गांधीजी ने हिंदी के प्रति अपने प्रेम को भाषणों के साथ–साथ समाचार पत्रों तथा अपने लेखों में मुखरता है वकालत की है। गांधीजी 28 मई 1917 को 'प्रताप' में प्रकाशित अपने लेख में लिखते है कि "हिंदी ही हिंदुस्तान के शिक्षित समुदाय की सामान्य भाषा हो सकती है, यह बात निर्विवाद सिद्ध है। यह कैसे हो, केवल यही विचार करना है। जिस स्थान को अंग्रेजी भाषा आजकल लेने का प्रयत्न कर रही है और जिसे लोग लेना उसके लिए उसके लिए असंभव है, वहीं स्थान हिंदी को मिलना चाहिए, क्योंकि हिंदी का उस पर पूर्ण अधिकार है। यह स्थान अंग्रेजी को नहीं मिल सकता, क्योंकि वह विदेशी भाषा है और हमारे लिए बड़ी कठिन है। अंग्रेजी की अपेक्षा हिंदी सीखना बेहद सरल है। हिंदी बोलने वालों की संख्या प्रायरू साढ़े छह करोड़ है। बंगला, बिहारी, उडिया, मराठी, गुजराती, राजस्थानी, पंजाबी और सिंधी हिंदी की बहने है। उक्त भाषाओं को बोलने वाले थोड़ी बहुत हिंदी समझ तथा बोल लेते है। इन सबको मिलाने से संख्या प्रायरू 22 करोड़ हो जाती है। जिस भाषा का इतना प्रचार है, उसकी बराबरी करने के लिए अंग्रेजी, जिसे एक लाख भी हिंदुस्तानी ठीक–ठीक नहीं बोल सकते, क्योंकर समर्थ हो सकती है?"

गाँधीजी ने अनेक बार हिंदुस्तानी से वो किस भाषा की वकालत करते है इसे स्पष्ट किया है। उन्होंने 11 नवबंर 1917 को मुजफ्फरपुर, बिहार की सभा में कहा कि "मैं यह कहता आया हूँ कि राष्ट्रीय भाषा एक होनी चाहिए और हिंदी होनी चाहिए। मैंने सुना है कि इस संबंध में कई मुसलमान बंधुओं के मन में गलतफहमी है। उनमें बहुतेरों को ख्याल है कि 'हिंदी होनी चाहिए' यह कहकर मैं उर्दू का विरोध करता हूँ। हिंदी भाषा से मेरा मतलब उस भाषा से जिसे उत्तरभारत में हिंदू और मुसलमान दोनों बोलते है और जो नागरी तथा उर्दू लिपि में लिखी जाती है। उर्दू के लिए मेरे मन में कोई द्वेष नहीं है। मेरी तो यह मान्यता है कि दोनों भाषाएँ एक ही है। मेरे ख्याल से तो दोनों भाषाओं का गठन, दोनों का ढंग, संस्कृत और अरबी शब्दों के भेद को छोड़कर, एक ही प्रकार का है। मेरा झगड़ा तो अंग्रेजी के विरुद्ध है। मुझे द्वेष उससे भी कोई नहीं है, परन्तु अंग्रजी भाषा के माध्यम से हम जनता में घुलमिल नहीं सकते और उनके साथ एकरस होकर काम नहीं कर सकते। मेरे कहने का आशय इतना ही है। हिंदी को आप हिंदी कहें या हिंदुस्तानी, मेरे लिए तो दोनों एक ही है। हमारा कर्तव्य यह है कि हम अपना राष्ट्रीय कार्य हिंदी भाषा में करें। लिपि के संबंध में यह होगा कि हिंदू बालक नागरी में लिखेगा और मुसलमान उर्दू में। इससे किसी भी प्रकार की हानि नहीं है। पर दोनों ही दोनों लिपि सीखेंगे। हमारे बीच हमें अपने कानों में हिंदी के ही शब्द सुनाई दें। अंग्रेजी के नहीं। इतना ही नहीं, हमारी धारा सभाओं में जो वाद–विवाद होता है वह भी हिंदी में होना चाहिए। ऐसी स्थिति लाने के लिए मैं जीवन भर प्रयत्न करुंगा।

गांधी जी हिंदी के प्रति अपने प्रेम और आवश्यकता पर जोर देते हुए अंग्रजी सीखने या अंग्रेजी जानने का विरोध नहीं करते है। गांधीजी अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और कूटनीति के लिए अंग्रेजी को आवश्यक मानते थे लेकिन भारत को एकसूत्र में बांधने के लिए हिंदी की आवश्यकता पर बल देते है। गांधी जी 2 फरवरी 1921 को यंग इंडिया में लिखते है कि 'अंग्रेजी अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की भाषा है, वह संबंधो की कूटनीति की भाषा है, उसके साहित्य का भंडार बड़ा ही संपन्न है, इसके द्वारा हमें पश्चिमी विचारों और सभ्यता की जानकारी प्राप्त होती है। इसलिए हममें से थोड़े लोगों के लिए अंग्रेजी का ज्ञान जरुरी है। यह लोग राष्ट्रीय व्यापार और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को चला सकते है और

देश को पाश्चात्य ज्ञान–विज्ञान और साहित्य एवं विचारों की श्रेष्ठतम उपलब्धियों का ज्ञान करा सकते है। यही अंग्रेजी का उचित उपयोग होगा। मगर आज तो उसने हमारे मन–मंदिर में सबसे ऊँचा स्थान बना रखा है और मातृभाषाओं को उनके उचित स्थान से च्युत कर दिया है।"

जैसा कि उस समय के सभी लोग जानते थे कि महात्मा गाँधी ने बैरिस्टर की पढ़ाई लिखाई और कार्य अंग्रेजी में किया तथा वे अंग्रेजी के प्रेमी भी रहे है लेकिन हिंदी के प्रति अपने प्रेम और विद्यार्थीयों को हिंदी सीखने के लिए महात्मा गाँधी ने प्रेरति किया। हरिजन पत्र के 17 नवंबर 1922 में प्रकाशित पत्र में गांधीजी विद्यार्थीयों को कहते है, "आप जानते हैं या आपको जानना चाहिए कि मैं अंग्रेजी भाषा का प्रेमी हूँ परन्तु मेरा यह विश्वास अवश्य है कि अगर भारत के विद्यार्थी, जिनसे यह आशा रखी जाती है कि वे लाखों गरीबों का जीवन अपनाकर अपनी सेवा केरेंगे, अंग्रेजी की बजाय हिंदुस्तानी पर ज्यादा ध्यान दें, तो उनकी योग्यता ज्यादा बढ़ेगी। मैं यह नहीं कहता कि आपको अंग्रेजी नही सीखनी चाहिए; शौक से सीखये। परन्तु जहाँ तक मुझे दिखायी देता है, वह लाखों हिंदुस्तानी घरों की भाषा नहीं हो सकती। वह हजारों या लाखों आदमीयों तक सीमित रहेगी, परन्तु वह करोडों की भाषा नहीं बन सकती। इसलिए जब विद्यार्थी मुझे हिंदी में बोलने को कहते हैं तो मुझे हर्ष होता है।"

महात्मा गांधी अपने राजनीतिक जीवन के प्रथम दशक में देश के लिए उपयुक्त राष्ट्रभाषा के सवाल पर गंभीरता से विचार करते है। गांधीजी मातृ भाषा, राष्ट्र भाषा और अंतर्राष्ट्रीय भाषा के रुप में तीन भाषाओं पर विचार करते है। गांधीजी वैकल्पिक भाषा के रुप में अंग्रेजी को उत्कृष्ट मानते थे लेकिन राष्ट्रभाषा के रुप में उनका पहला प्रेम हिंदी ही रही। गांधीजी ने 20 अप्रेल 1935 के इंदौर भाषण में स्पष्ट शब्दों में कहा कि "अंग्रेजी राजभाषा है। ..... हिंदुस्तान को अगर सचमुच एक राष्ट्र बनाना है तो चाहे कोई माने या न माने दृ राष्ट्रभाषा तो हिंदी ही बन सकती है, क्योंकि जो स्थान हिंदी को प्राप्त है, वह किसी दूसरी भाषा को कभी नहीं मिल सकता। हिंदू–मुसलमान, दोनों को मिलाकर करीब बाइस करोड़ मनुष्यों की भाषा, थोड़े फेरफार से, हिंदी–हिंदुस्तानी ही है। इसलिए उचित और संभव तो यही है कि प्रत्येक प्रांत की भाषा, सारे देश के पारस्परिक व्यवहार के लिए हिंदी और अंतर्राष्ट्रीय उपयोग के लिए अंग्रेजी का व्यवहार हो।"

गुजराती भाषी क्षेत्र के साथ ही जब गांधी जी हिंदी भाषी क्षेत्र में अपनी बात रखते है तो इसमें ओर अधिक स्पष्टता आ जाती है। सन 1918 में हिंदी साहित्य सम्मेलन में बतौर सभापति गाँधीजी ने कहा "अगर आपकी दृष्टि मर्यादा उत्तर में श्रीनगर से दक्षिण में कन्याकुमारी तक और पश्चिम में कराची से डिब्रूगढ़ तक पहुँचती हो और इतनी पहुँचनी भी चाहिए तो उसके लिए आपके पास हिंदी को छोड़कर कोई माध्यम नहीं है।"

इस प्रकार भाषा के सवाल पर गांधी जी तीन बाते जरुरी मानते थे।

1. प्रत्येक भारतवासी अपनी मातृभाषा के साथ हिंदी को जरुर सीखे।
2. देश के लोगों को अन्य भाषाओं को ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिए। मुसलमानों और पारसियों के लिए संस्कृत की जानकारी उपयोगी है तो हिंदुओं के लिए अरबी–फारसी की, इसी तरह उत्तर भारत के लोगों के लिए दक्षिण भारत की भाषाओं की जानकारी होना जरुरी है।
3. जहाँ तक लिपि का सवाल है, उर्दू या नागरी दोनों के उपयोग की छूट होनी चाहिए।

महात्मा गांधी के लेखों और भाषणों से यह स्पष्ट है कि राष्ट्रभाषा के लिए उनका प्रेम और आवश्यकता हिंदी रही। इन मंतव्यों के आधार स्पष्ट होता है कि गांधी जी कि नजर में अंग्रेजी राष्ट्रीय भाषा नहीं बन सकती है और एक मात्र भाषा जो उनके पूर्व शर्त को पूरा करती है वह हिंदी थी। यहाँ पर हमें महात्मा गांधी की राष्ट्रीय भाषा पर नजर

और हिंदी के स्वरुप को समझने की आवश्यकता है। 1917 के उसी व्याख्यान में, उन्होंने तर्क दिया कि पाँच–बिंदु मानदंड को पूरा करने वाली भाषा हिंदी थी। हिंदी के लिए उनका क्या अर्थ है ष्मैं उस भाषा को हिंदी कहता हूं जिसे उत्तर ख्भारत, में हिंदू और मुस्लिम बोलते हैं और जो या तो देवनागरी या उर्दू लिपि में लिखी जाती है - उन्होंने दोहराया कि हिंदी और उर्दू दो अलग–अलग भाषाएँ नहीं हैं, बल्कि एक ही भाषा है। उनका मानना है कि, शिक्षित वर्गों द्वारा गलत तरीके से प्रचारित किया गया था, जिसमें शिक्षित हिंदुओं ने संस्कृत का हिंदीकरण किया था और शिक्षित मुसलमानों ने एक इरादे के साथ उर्दू का फारसीकरण किया ताकि दूसरे उनका अनुसरण न कर सकें। पटकथा के संबंध में, वह निश्चित था कि हिंदू देवनागरी में लिखेंगे और मुसलमान उर्दू लिपि में (गांधी 1956: 5)।

20 अक्टूबर 1917 को गुजरात शैक्षिक सम्मेलन, भरुच में अपने अध्यक्षीय भाषण में, उन्होंने राष्ट्रीय भाषा बनने के लिए सूत्र वाक्य प्रदान किए। वे निम्न है:

(1) सरकारी अधिकारियों के वह भाषा सरल एवं सीखने में आसान होना चाहिए।

(2) भाषा के द्वारा भारत के साथ अधिकांश निवासियों के बीच आपसी, धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक संवाद स्थापित करने में सक्षम हो।

(3) यह जरुरी है कि भारतवर्ष के बहुत से लोग उस भाषा को बोलते हों।

(4) उस भाषा का विचार करते समय किसी क्षणिक या अल्प स्थायी स्थिति पर जोर नहीं देना चाहिए।

(5) इस भाषा को चुनने के लिए अस्थायी या गुजराती रुचि के विचारों को नहीं गिना जाना चाहिए

तात्कालीन समय में गाँधीजी द्वारा राष्ट्रभाषा के सूत्रवाक्यों में एक भी खूबी अंग्रेजी में नहीं दिखाई देती है। इसलिए राष्ट्रभाषा के रुप में गाँधी का प्रथम प्रेम हिंदी भाषा ही रही। गाँधी जी राष्ट्रभाषा के सवाल और हिंदी के प्रति प्रेम को दर्शाने के दौरान क्षेत्रीय भाषाओं की को दरकिनार करने या हिंदी को विरोधी के रुप में खड़ा नहीं मानते है। गाँधी जी का इस संबंध में वक्तव्य है कि"ऐसा भय प्रकट किया गया कि राष्ट्रभाषा का प्रचार प्रांतीय भाषाओं को नुकसान पहुँचानेवाला साबित होगा। लेकिन इस डर का कारण अज्ञान है। सच पूछा जाय तो प्रांतीय भाषाओं की पक्की बुनियाद पर ही राष्ट्रभाषा की भव्य इमारत खड़ी होगी। दोनों एक–दूसरे की पूरके है, एक दूसरे की जगह लेनेवाली नहीं।

गांधीजी का हिंदी के प्रति प्रेम ही था कि उन्होंने 1925 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कानपुर में आयोजित सम्मेलन में हिंदी को संचार की भाषा बनाने के लिए पार्टी संविधान में संशोधन किया, जिसका एनिबेंसेट ने खुलकर विरोधी भी किया। एनीबेसेंट ने कहा कि कांग्रेस के राष्ट्रीय अधिवेशन में संचार भाषा के रुप में हिंदी को अपनाने से कांग्रेस राष्ट्रीय सभा की बजाय प्रांतीय सभा हो गई हैं, क्योंकि इसकी कार्यवाहीं हिंदुस्तानी में हो रही थी। इसके जवाब में गांधी ने लिखा "मैंने कांग्रेस के सभी सत्रों में भाग लिया, लेकिन 1915 से एक ओर, अपनी कार्यवाही के संचालन के लिए अंग्रेजी की तुलना में हिंदुस्तानी की उपयोगिता का अध्ययन करने के लिए विशेष रूप से उनका अध्ययन किया है और सैकड़ों प्रतिनिधियों और आगंतुकों से बात की है मैं जानबूझकर इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि हिंदुस्तानी को छोड़कर कोई भी भाषा – हिंदी और उर्दू का परिणाम नहीं है संभवतः विचारों के आदान–प्रदान के लिए एक राष्ट्रीय माध्यम बन सकता है।"

इस प्रकार सन् 1925 में कानपुर में आयोजित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेश में पार्टी संविधान में संशोधन किया जाता है। अनुच्छेद XXXIII में इस प्रकार संशोधन किया गया कि: "कांग्रेस की कार्यवाही हिंदुस्तानी

में यथासंभव संचालित की जाएगी। यदि स्पीकर हिंदुस्तानी या जब भी आवश्यक हो, बोलने में असमर्थ होने पर अंग्रेजी भाषा या किसी भी प्रांतीय भाषा का उपयोग किया जा सकता है। प्रांतीय कांग्रेस कमेटी की कार्यवाही आमतौर पर संबंधित प्रांत की भाषा में आयोजित की जाएगी। हिंदुस्तानी भी इस्तेमाल किया जा सकता है।"

अब के ऐतिहासिक भाषणों और गाँधीजी की लेखनी से यह स्पष्ट हो जाता है कि गाँधी जी जिस हिंदी की वकालत करते है वह हिंदुस्तानी है। यानि हिंदी–उर्दू की साझी जबान, हिंदुओ और मुसलमानों द्वारा बोली जाने वाली भाषा, जिसे हिंदु लोग देवनागरी में लिखते थे तथा मुसलमान नेस्तालिख में लिखते है। एक प्रकार से "हिंदुस्तानी" शब्द के साथ गांधी का निर्धारण उत्तर भारत के अधिकांश हिंदुओं और मुसलमानों द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संदर्भ में है। तात्कालिक भाषाई भुगोल की दृष्टि से गांधी जी जिसे हिंदुस्तानी कहते थे उसके अनेक रुप रहे। दक्षिण में वह दख्खिनी हिंदी के रुप में बोली जाती थी तो वहीं उसे भाषाई तौर पर हिंदवी, हिंदी, हिंदुस्तानी, ज़बान–ए–देहलवी, खड़ी बोलि, मध्यदेश की बोली, रेख्ता, ज़बान–ए–उर्दू–ए–मुअला, उर्दू अनेक नामों से जाना जाता था। गांधी ने हिंदुस्तानी का इस्तेमाल हिंदी और उर्दू के मिश्रण के लिए किया, और सोचा कि देवनागरी और फारसी लिपियों में इसे बढ़ावा देने से भारत के दो प्रमुख समुदाय करीब आएंगे।

गाँधी हिंदुस्तानी की अपनी समझ में अकेले नहीं थे क्योंकि हिंदी और उर्दू का मेल था। भारत के पहले भाषाई सर्वेक्षण, जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन को बाहर लाने के लिए जिम्मेदार आयरिश भाषाविद ने हिंदी को ष्पश्चिमी भारत के हिंदुस्तानी बोली का एक रूप, जिसे पूरे उत्तर भारत में व्यापक रूप से बोला जाता है के रूप में परिभाषित किया। उन्होंने आगे बताया कि उर्दू पश्चिमी भारत की हिंदुस्तानी बोली का एक रूप है, जिसे आम तौर पर फारसी लिपि में लिखा जाता है

1909 से 1936 तक आते–आते गाँधी जी का हिंदी के प्रति प्रेम और राष्ट्रभाषा के रुप में अपनाने की राय पुख्ता हो जाती है। गाँधी जी ने 1936 में नागपुर में हिंदी साहित्य सम्मेलन की बैठक में भाषाविदों और विद्वानों से भारत के लिए षहिंदुस्तानीष भाषा के रूप में विचार करने के लिए कहा। उन्हें सुझाव दिया गया कि इसे "हिंदी–हिंदुस्तानी" कहा जाना चाहिए, जिसे गांधी ने आसानी से स्वीकार कर लिया कि अर्थ अपरिवर्तित रहा। हिंदी साहित्य सम्मेलन ने "हिंदी–हिंदुस्तानी" को अंतरप्रांतीय संवाद के लिए आम भाषा के रूप में स्वीकार किया गया। उन्होंने यह आश्वासन दिया कि उन्होंने हिंदुओं और मुसलमानों दोनों को आम भाषा को समृद्ध करने के प्रयास के साथ खुद को पहचानने की पूरी गुंजाइश दी है।

महात्मा गाँधी द्वारा हिंदी और उर्दू के इतर हिंदुस्तानी–हिंदी शब्द के इस्तेमाल को लंबे समय तक दोनों ही धर्मों के लोगों ने स्वीकार नहीं किया। जिस कारण गाँधी जी काफी आहत रहे। वे यह अच्छी तरह से जानते थे कि हिंदी–उर्दू नाम का विवाद केवल भाषाई विवाद नहीं बल्कि धर्म का विवाद और देश के बंटवारे का विवाद भी बन सकते है। उर्दू वालों का मानना था कि गाँधीजी ने हिंदी की आड में उर्दू की भलाई के लिए कुछ नहीं किया। इस पर हरिजन सेवक के 10 अप्रैल 1937 में गाँधी जी अपनी पीड़ा व्यक्त करता हुआ कि "हिंदी की जगह पर हिंदी–हिंदुस्तानी नाम मेरी तज़बीज से स्वीकार किया गया था। अब्दुल हक साहब ने वहाँ जोरों से मेरी मुखालिफत। मैं उनका सुझाव मंजूर न कर सका। जो शब्द हिंदी साहित्य सम्मेलन का था और जिसकी इस प्रकार की व्याख्या करने के लिए मैंने सम्मेलन वालों को मना लिया था कि उसमें उर्दू भी शामिल कर दी जाए, उस हिंदी शब्दो को मैं छोड़ देता तो मैं खुद अपने प्रति और सम्मेलन के प्रति भी हिंसा करने का दोषी होता। यहाँ हमें यह याद रखना चाहिए कि यह हिंदी शब्द हिंदुओं का गढ़ा हुआ नहीं है। यह तो इस मुल्क में मुसलमानों के आने के बाद उस भाषा को बतलाने के लिए बनाया गया था, जिसे उत्तर हिंदुस्तान के हिंदु बोलते और लिखते थे।"

गौरतलब है कि हिंदी–साहित्य सम्मेलन द्वारा हिंदी–हिंदुस्तानी को आम भाषा के रूप में स्वीकार करने से जल्द

ही एक और मोड़ आ गया। सन 1939 ई. के अबोहर अधिवेशन में हिंदी साहित्य सम्मेलन ने संस्कृतनिष्ठ हिंदी के समर्थक साहित्यकारों ने नेस्तालिक लिपि में लिखित उर्दू या यूं कहे हिंदुस्तानी की बजाय नागरी लिपी में लिखी जाने वाली हिंदी के ही प्रचार–प्रसार की घोषणा की तथा इसके सदस्यों ने हिंदी के संस्कृत संस्करण को राष्ट्रभाषा के रूप में पेश किया। इसके परिणामस्वरूप गांधी ने हरिजन सेवक के 15 मार्च 1942 के पत्र में लिखा कि "भाव के झक्कड़ के सामनने सच की लौ झिलमिलाने लगती है और उसका प्रकाश मध्यम पड़ जाता है। मैं यह चाहता हूँ कि आप (डॉ. ताराचंद) इस झगड़े की आँधी से देश को बचाने में मदद करें। जबान का सवाल है। जबान के सवाल के हल पर थोड़ा बहुत स्वराज का दारोमदार जरुर है। इसे में मैं दिलचस्पी लेता हूँ और चाहता हूँ कि आपकी सहायता का सौभाग्य हासिल करुँ।"

2 मई 1942 को हिंदुस्तानी प्रचार सभा में कठोर शब्दों में कहा कि अगर हिंदी साहित्य सम्मेलन के लोग जोर देकर कहते हैं कि वे केवल संस्कृत–व्यापी हिंदी के लिए काम करेंगे, तो सम्मेलन मेरे लिए मौजूद है। ग्रामीणों की भाषा एक है; यह दो नहीं हो सकता। हिंदी के लोग चाहते हैं कि मैं हिंदी पर गर्व करूं और उर्दू के एक शब्द का भी जिक्र न करूं। लेकिन अहिंसा में विश्वास रखने वाला मैं एक सत्याग्रही कैसे हो सकता हूं? हिंदुस्तानी पर अपने आग्रह के बारे में बोलते हुए, उन्होंने स्पष्ट किया कि वह इस प्रक्रिया में गायब होने या नष्ट होने के लिए या तो हिंदी या उर्दू नहीं चाहते थे। एक सत्याग्रही के रूप में, उन्होंने कहा, वह सार्वभौमिक प्रेम में विश्वास करते थे और दोनों भाषाओं को देश की भलाई के लिए चाहते थे। जहाँ हिंदी साहित्यकारों से वे दो टूक सच्चे सत्याग्राही होने की बात कहते है तथा उर्दू के उन शब्दों के इस्तेमाल की बात करते है जो ग्रामीण भाषा में सहज रुप से शामिल है।

गांधी ने अपनी मृत्यु हिंदी शब्द का इस्तेमाल करने के धार्मिक अर्थ को देखते हुए, उन्होंने इसकी जगह हिंदुस्तानी को ले लिया। गांधी का विचार था कि हिंदी और उर्दू का भेद असत्य है, और कहा "हिंदुओं के लिए फारसी शब्दों को अस्वीकार करना और मुसलमानों को उनके भाषण से संस्कृत शब्दों को अस्वीकार करना अनावश्यक है। दोनों का एक सामंजस्यपूर्ण मिश्रण गंगा और यमुना के संगम और हमेशा की तरह सुंदर होगा।" इस बिंदु को उसके द्वारा फिर से दोहराया गया जब उसने कहारू "हिंदी और उर्दू गंगा और यमुना की तरह हैं। हिंदुस्तानी सरस्वती है। इसने अभी तक अपनी उपस्थिति नहीं बनाई है, फिर भी यह वहां है।" गांधी जी की सरस्वती रुपी हिंदुस्तानी–हिंदी आजादी के आते–आते अमूर्त लगने लगी। गाँधीजी का हिंदी भाषा के प्रति प्रेम गंगा–जमुनी तहजीब से पनपी हिंदुस्तानी के लिए था लेकिन 1946 तक आते–आते भारत विभाजन निश्चित से माने जाने लगा। ऐसे वक्त में गांधीजी ने कहा कि "यदि देश के टुकड़े होने ही हैं, तो फिर हिंदुस्तानी प्रचार का काम सबसे पहले खत्म होगा। कम से कम मुझे तो इस काम को चालू रखने में कोई दिलचस्पी नहीं होगी।"

15 अगस्त 1947 को देश आजाद हो गया। गाँधीजी इस बात को समझ चुके थे कि पाकिस्तान बनने के बाद लोग हिंदुस्तानी भाषा और दो लिपियों की बात नहीं करेंगे। 2 जनवरी 1948 को गाँधीजी ने अपने जीवन का अंतिम अनशन आरंभ किया था। उसके पांच दिन बाद अनशन तोड़ने की शर्ते निश्चित हुई थी। उनमें भारत के तत्कालीन शिक्षा मंत्री मौलान अबुल कलाम आजाद ने अंत में दो लिपियाँ और हिंदुस्तानी की शर्तें अपने हाथ से जोड़ दी थी। किंतु गाँधीजी ने अपने हाथ से दो लिपियो और हिंदुस्तानी वाले बाते काट दी थी।

गाँधीजी ने जीवन पर्यत्न राजनीतिक रुप से गुजराती भाषी और अंग्रेजी में दक्ष होने के बावजूद राष्ट्र के लिए हिंदी की आवश्यकता और प्रेम का अपनी लेखनी, भाषणों और क्रिया–कलापों में स्पष्ट रुप से उजागर किया। यह अलग बात है कि ता उम्र दो लिपियों की वकालत करने वाली गांधीजी अंत समय में देवनागरी लिपी में बोली जाने वाली हिंदी के लिए सहमति जताते है। गाँधीजी की 1909 से 1948 तक की जीवन यात्रा में हिंदी के प्रति प्रेम भाषणों,

पत्रो, अधिवेशनों तथा समय–समय पर होने वाले वार्तालाप में मुखरता से दिखाई देता है। आजादी के आंदोलन में महात्मा गाँधी वे प्रथम व्यक्ति है जिन्होंने राष्ट्रभाषा के सवाल पर हिंदुस्तानी–हिंदी की पुरजोर वकालत की तथा हिंदी के अपने प्रेम को सदा सार्वजनिक रुप से प्रकट किया था।

सहायक आचार्य.हिंदी विभाग
जयनारायण व्यास
विश्वविद्यालय,
जोधपुर (राज.)

संदर्भ सूची

1 हिंद स्वराज: शिक्षा शीर्षक के 18 वें प्रकरण (1909)
2 महात्मा गाँधी–देशमुख 1972: 2
3 ए वाकेबुलरी हिंदुस्तानी एंड इंग्लिश (एडिनबरा), जे.बी.गिलक्रिस्ट उद्धृत राष्ट्रभाषा की समस्या, डॉ. रामविलास शर्मा
4 थोट्स ऑन नेशनल लेंग्युएज, महात्मा गाँधी 1956
5 संपूर्ण गांधी वांग्मय, खंड 13] पृ.213
6 संपूर्ण गांधी वांग्मय, खंड 13] पृ. 214
7 संपूर्ण गांधी वांग्मय पृ 424
8 संपूर्ण गांधी वांग्मय, खंड14] पृ.79
9 संपूर्ण गांधी वांग्मय पृ. 320
10 विद्यार्थियों के प्रति: मो.दा.करमचंद गांधी, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, पृ.स.68
11 संपूर्ण गांधी वांग्मय खंड 60] पृ. 491
12 गांधीजी के श्रेष्ठ शिक्षाप्रद भाषण, स. बालकृष्ण राव, पृ.21
13 गांधी 1956: 4
14 विद्यार्थियों के प्रतिरू मो.दा.करमचंद गांधी, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, पृ.स. 71
15 राष्ट्रभाषा आंदोलन और गाँधीजी, रामधारी सिंह 'दिनकर' स.1968] पृ.105
16 गाँधी हिंदी दर्शन पृ.144
17 हिंदुस्तानी की शर्त अंत में नहीं रखी, लेखक: वेंकटलाल ओझा, गाँधीजी और राष्ट्रभाषा प्रचार, पृ. 404